□□□□□ □□□□□

जनसत्ता 29 जुलाई, 2014 : लोकतंत्र में अगर तंत्र की भाषा लोक से भिन्न हो जाए तो यह लोकतंत्र के लिए अच्छा सूचक नहीं है।

संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित की जाने वाली सिविल सेवा परीक्षा में भाषाई आधार पर भेदभाव के जो आरोप सामने आ रहे हैं उनसे अंगरेजी मानसिकता की वर्चस्ववादी नीति और भारतीय भाषाओं की दुर्दशा पर एक बार फिर विचार करने की जरूरत पैदा हुई है। लोक की सेवा किस भाषा में की जाए अगर यह बताने के लिए इस देश के युवाओं को आमरण अनशन पर बैठना पड़े तो इससे बड़ा दुर्भाग्य क्या हो सकता है! पिछले दिनों दिल्ली, इलाहाबाद, बनारस, गुवाहाटी, तमिलनाडु आदि राज्यों में छात्र जब अपनी भाषा में रोजगार के हक के लिए सड़कों पर प्रदर्शन करते नजर आए तो व्यापक बहस छिड़ी कि भारतीय संविधान में उल्लिखित भाषाओं की असल स्थिति आखिर है क्या? क्या प्रशासन की भाषा अंगरेजी होना अनिवार्य है? सिविल सेवा परीक्षा में भारतीय भाषाओं की अनदेखी पर जिस तरह देश भर में प्रदर्शन हुए उसने अंगरेजी की अनिवार्यता से भारतीय भाषाओं पर उपजे संकट को चंद रोज में उजागर कर दिया।

डॉ दौलत सिंह कोठारी की सिफारिशों के आधार पर वर्ष 1979 में सिविल सेवा परीक्षा में अंगरेजी के साथ भारतीय भाषाओं में भी उत्तर देने की छूट दी गई थी। लेकिन 2011 से लागू नई परीक्षा पद्धति के बाद भारतीय भाषाएं अंगरेजी के वर्चस्व से हाशिये पर आ गई हैं। नई प्रणाली में प्रारंभिक परीक्षा के अंतर्गत दो पर्चे सामान्य अध्ययन और दूसरा पर्चा सिविल सर्विसेज एप्टिट्यूड टेस्ट यानी सीसैट का होता है। हिंदी माध्यम छात्रों के लिए यही दूसरा पर्चा परेशानी का सबब बना हुआ है। 2011 से पहले हिंदी सहित भारतीय भाषाओं में प्रारंभिक परीक्षा पास कर मुख्य परीक्षा में बैठने वाले छात्रों की संख्या जहां लगभग पचास प्रतिशत हुआ करती थी वहीं सीसैट आने के बाद घट कर मात्र पंद्रह से बीस प्रतिशत रह गई है।

अगर अंतिम चयनित अभ्यर्थियों की संख्या देखें तो 2011 से पूर्व अंतिम चयनित सूची में भारतीय भाषाओं के उम्मीदवारों की हिस्सेदारी पंद्रह से बीस फीसद हुआ करती थी जो अब दो से तीन प्रतिशत ही बची है। इस वर्ष के घोषित परिणामों में 1122 छात्रों में हिंदी माध्यम के केवल छब्बीस और अन्य भारतीय भाषाओं को मिला लिया जाए तो भी यह संख्या तिरपन तक ही पहुंचती है। अगर पिछले तीन वर्षों के परिणामों को तीनों चरणों में अलग-अलग देखा जाए तो भारतीय भाषाओं से आए उम्मीदवारों की चयन संख्या में अविश्वसनीय ह्रास देखने को मिलता है। ये आंकड़े प्रमाणित करते हैं कि नई परीक्षा पद्धति भारतीय भाषाओं पर भारी पड़ रही है।

अब आइए जरा इस नई प्रणाली के दूसरे पर्चे 'सीसैट' पर नजर डालते हैं जिससे यह स्थिति और साफ हो जाएगी। इस दूसरे पर्चे में परिच्छेद यानी कॉम्प्रिहेंशन, निर्णयन क्षमता, समस्या समाधान, तर्क (रीजनिंग), गणित आदि के अस्सी सवाल होते हैं और प्रत्येक प्रश्न ढाई अंक का होता है। छात्रों की परेशानी मूल रूप से इस प्रश्नपत्र में पूछे जाने वाले गद्यांश के प्रश्नों से है जिनकी संख्या चालीस से अधिक होती है। इन चालीस-बयालीस प्रश्नों में आठ से नौ अंगरेजी के अनिवार्य प्रश्न हैं जिनका अंकभार बीस से बाईस होता है। वहीं गद्यांश के बाकी बचे प्रश्न मूल रूप से अंगरेजी में बनाए जाते हैं जिनका अनुवाद हिंदी माध्यम के छात्रों के लिए किया जाता है। अगर यह अनुवाद सरल हिंदी में होता तो किसी को आपत्ति न होती लेकिन यह अनुवाद इतना जटिल और संस्कृतनिष्ठ शब्दों से भरा होता है कि इसे पढ़ना और समझना किसी अन्य लोक के प्राणी होने का आभास दिलाता है।

नमूने के तौर पर यह प्रश्न देखयि-

‘संगठनात्मक प्रबंधन और प्रतकिार के माध्यम से कर्मचारयिों द्वारा ऊपरमुखी प्रभाव प्रयास के माध्यम से अनुसरण कीए जा रहे मनोवैज्ञानकि संवदिा की क्या प्रकृत्ति होती है?’

दावे के साथ मैं कह सकता हूं कि हिंदी के वदि्वान भी जब ऐसी अनूदति हिंदी पढ़ेंगे तो कई बार पढ़ने पर भी इस अबूझ दुनयिा को समझ सकेंगे इसकी कोई गारंटी नहीं। फरि कैसे हिंदी माध्यम का छात्र दो घंटे के नशि्चति समय में ऐसे ‘दवि्य’ अनूदति गद्यांश पढ़ कर इन प्रश्नों संग अन्य प्रश्नों के भी उत्तर दे सकता है? चूंकि ये गद्यांश मूल रूप से अंगरेजी में होते हैं इसलिए किसी भी अंगरेजी भाषी छात्र के लिए इन्हें समझना आसान होता है। यहां तक कि उत्तर भी अंगरेजी प्रश्नों के अनुरूप ही जांचे जाते हैं। अब फर्ज कीजिए अगर हिंदी में अनुवाद गलत हो जाए और परीक्षार्थी उसी अनुवाद के अनुसार उत्तर दे तो न केवल उसका उत्तर गलत माना जाएगा बल्कि ऋणात्मक अंक कटौती भी होगी।

इतना बड़ा खेल गैर-अंगरेजी भाषयिों के साथ ही क्यों? क्या यूपीएससी की नजर में अंगरेजी छोड़ किसी भाषा में ऐसा कुछ नहीं लखिा जाता जसिे मूल रूप से प्रश्नपत्र में शामलि कयिा जा सके? क्या भारतीय भाषाओं का अस्तत्वि केवल अनुवाद पर टकिा है? और अगर अनुवाद होता भी है तो इतना तकनीकी और ऊटपटांग अनुवाद क्यों जसिमें न्यूक्लीयर प्लांट को नाभकिीय पौधा लखिा जाए। आयोग की सुषुप्तावस्था का इससे बड़ा प्रमाण क्या होगा कि पछिले तीन साल से ऐसे अबूझ अनुवादों से लैस प्रश्नपत्रों में उसे कुछ गलत नजर नहीं आया।

दूसरा महत्त्वपूर्ण बिंदु है अंगरेजी की अनविार्यता। इस परचे के पाठ्यक्रम में कहा गया कि आठ से नौ प्रश्न यानी बीस से बाईस अंकों के प्रश्न दसवीं तक की अंगरेजी के होंगे। सवाल है कि यह कैसे तय होगा और क्या प्रमाण है कि दयिा गया परच्छिेद दसवीं तक की अंगरेजी का ही है? और अगर है तो क्या अंगरेजी माध्यम के लिए यह बीस अंक मुफ्त में बांटने जैसा नहीं? वहीं ग्रामीण परवेश का छात्र इन अंकों के लिए संघर्ष करता है। गैर-अंगरेजी भाषी छात्र इसके लिए संघर्ष करने को तैयार भी हैं लेकनि यह संघर्ष इकतरफा क्यों? क्या सवलि सेवक बनने के लिए केवल अंगरेजी भाषा का परचिय देना अनविार्य है? क्यों हिंदी या अन्य किसी भारतीय भाषा की परचियात्मक जांच अनविार्य प्रश्नों के साथ नहीं की जाती?

छात्रों का वरिोध अंगरेजी भाषा से कभी नहीं रहा। अगर ऐसा होता तो मुख्य परीक्षा में अंगरेजी के तीन सौ अंकों के अनविार्य परचे को हटाने के लिए भी आंदोलन हुआ होता जसिमें अनुत्तीर्ण होने पर मुख्य परीक्षा की कॉपयिों की जांच तक नहीं होती। लेकनि ऐसा नहीं हुआ। इसका कारण इसका क्वालफिाइंग होना है और यह अनविार्यता अंगरेजी, गैर-अंगरेजी सभी माध्यम के छात्रों के लिए है कि उन्हें अंगरेजी संग किसी एक भारतीय भाषा में क्वालीफाई करना होगा। प्रारंभकि परीक्षा में इसके वरिोध का मुख्य आधार मेरटि में इसके अंक जुड़ना है, जो एक बड़ा अंतर पैदा करता है। और फरि अभ्यर्थयिों को जब भाषा का परचिय मुख्य परीक्षा में देना ही है तो प्रारंभकि चरण में इसकी अनविार्यता क्यों?

यह बड़ी आश्चर्यजनक स्थतिि है कि संघ लोक सेवा आयोग जैसी संवैधानकि संस्था अपनी भाषाओं से समझौता करने को तैयार है। यह सही है कि वर्तमान दौर में अंगरेजी का ज्ञान होना आवश्यक है लेकनि यूपीएससी की वर्तमान प्रणाली कामचलाऊ जानकारी की जगह अंगरेजी में सदि्धहस्त होने की मांग पर जोर दे रही है जसिसे भारतीय भाषाओं में रोजगार पाना कठनि हो चला है।

जसि देश के पछि इलाकों के वदि्यालयों में शक्षिक की योग्यता ही सवालों के घेरे में हो, जहां गरीब तबका अपने बच्चों को महंगी अंगरेजी शक्षिा दलिा सकने में सक्षम नहीं है, वहां छात्रों से अंगरेजी की अनवािर्य मांग कैसे की जा सकती है?

यूपी ससी की ही नगिवेकर समति ने 2012 में इस बात को रेखांकति कयिा था कि यह नई परीक्षा प्रणाली ग्रामीण छात्रों के लिए उपयुक्त नहीं है। यह शहरी क्षेत्र के अंगरेजी माध्यम के छात्रों को फायदा पहुंचाती है। लेकनि इसके बावजूद आयोग ने इस प्रणाली की खामियों पर वचिार नहीं कयिा। क्या प्रतष्ठिति सेवाओं के लिए ऐसा प्रारूप आवश्यक नहीं, जसि अपने देश की शक्षिा प्रणाली को ध्यान में रख कर तैयार कयिा जाए? छात्रों की स्पष्ट मांग भी यही है। लेकनि प्रशासनकि सेवाओं में अंगरेजी की अनवािर्यता को यह कह कर सही ठहराया जाता है कि अगर आपकी तैनाती गैर-हदिी भाषी राज्य में होती है तब आप क्या करेंगे?

भाषा कोई आनुवंशकि या जैवकि प्रक्रयिा नहीं, बल्कि एक सामाजकि प्रक्रयिा है। जब कसिी दक्षणि भारतीय अधकिारी का तबादला हदिीभाषी क्षेत्र में होता है तो कुछ ही समय में उसकी मति्रता हदिी से हो जाती है और भाषा संग वह खेलने लगता है।

ठीक यही बात हदिीभाषी व्यक्ति के दक्षणि जाने पर भी लागू होती है। फरि क्यों परीक्षा में अंगरेजी का खाका वशिेष रूप से खींच दयिा गया है कि उसका ज्ञान पहले से आवश्यक है।

दलि्ली के मुखर्जी नगर से उठे इस आंदोलन ने देश को यह सोचने पर बाध्य कयिा है कि अधकिारी की संवाद भाषा और लखिति भाषा क्या हो? कागज पर नोटगि कसि भाषा में हो यह उतना ही महत्त्वपूर्ण है जतिना वंचति तबके से उसकी भाषा में संवाद स्थापति करना। क्या कलम की भाषा बोलचाल की भाषा से अलग होनी चाहिए या केवल नोटगि की भाषा ज्यादा अहमयित रखती है? आयोग को अब इस पर वचिार करना होगा। साथ ही भाषा और रोजगार का संबंध क्या हो यह भी एक बड़ा प्रश्न सामने आया है। क्या हमारी भाषाओं में इतना सामर्थ्य है या उन्हें इतनी ताकत सौंपी गई है कि उनमें अपना भवषि्य सुरक्षति रखा जा सके?

कोई भी भाषा केवल अपने साहति्य के दम पर जदिा नहीं रह सकती। यह जरूरी है कि ये भाषाएं साहति्य-संस्कृति के साथ-साथ रोजगार की भी भाषाएं बनें। सवििल सेवा अभ्यर्थयिों का आक्रोश भले सीसैट को लेकर हो, लेकनि उनके वरिोध ने जसि भाषाई संकट की ओर इशारा कयिा है उस पर गंभीरता से सोचने की जरूरत है। सरकार को अब यह समझना होगा कि जो भाषा रोजगार की भाषा, तकनीक की भाषा, बाजार की भाषा नहीं बनेगी उसका मरना नशि्चति है। फरि चाहे उसमें कतिने ही महाकाव्य लखिे हों, कतिनी ही पत्रकिाएं नकिली हों, सरकारी वभिाग बने हों, आप उसे भाषाई सप्ताह मना कर और जोहानसिबर्ग या मॉरीशस में सम्मेलन कराके बचा नहीं सकते।

फेसबुक पेज को लाइक करने के लिए क्लकि करें- https://www.facebook.com/Jansatta

ट्वटिर पेज पर फॉलो करने केलि क्लकि करें- https://twitter.com/Jansatta